आत्मकथा में दलित संवेदन

(मोहनदास नैमिशराय के अपने-अपने पिंजरे आत्मकथा के विशेष संदर्भ में)

प्रा. अशोक गोविंदराव उघडे
हिंदी विभाग
आदर्श महाविद्यालय, विटा,
तहसिल-खानापूर,
जिला सांगली (महाराष्ट्र)

सामान्यतः दलित शब्द का उच्चारण करते ही उपेक्षित, अविकसित, दीन-हीन मानव जाँति का बोध होता है। दलित शब्द की उत्पति दल् धातू से हुई है। जिसका अर्थ रौंदा हुआ या कुचला हुआ है।

सामान्यतः चातुवर्ण व्यवस्था के कारण मानव समाज का एक अंग पंरपरा से शोषित रहा। उसे दलित कहा गया।

संवेदना का मतलब सवर्णोंद्वारा किया गया जाँतिय शोषण के प्रति व्यक्ती के मन में होने वाला बोध या अनुभूति।

दलितोंका शोषण देखकर या स्वयं सहकर मोहनदास नैमिशराय ने अपने-अपने पिंजरे भाग-१ और भाग-२ ये आत्मकथा लिखी हैं। आत्मकथा का प्रथम भाग १९९५ और द्वितीय भाग २००१ में प्रकाशित किया गया। मोहनदास नैमिशराय का बचपन मेरठ में बिता है। उनकी माँ बचपन में ही चल बसी। उसके उपरांत उनकी परवरीश उनके पिता और ताऊँ माँ ने की।

आदमी को महत्त्वपूर्ण अपने जाँति ही होती है। वह जाँति के पिंजरे या शिकंजे में बंदिस्त रहता है। आज भी महानगरों या देहातों में अपने जाँति के नाम के इलाकें होते हैं जैसे जातीवाडा, बनियापाडा, पैदीवाडा, खटीकवाडा, चमरौटी आदि।

उनके पास ही मुसलमान रहते थे जो जाँति के नाम से उन्हे पुकारते हैं, उनका शोषण करतें हैं। जाँति के दीवार में हिंदू-और मूसलमान दोनों भी दलितों का शोषण करते है।

दलितों को मूसलमान हिंदू समझकर शोषण करतें हैं तो हिंदू उन्हे दलित या अस्पृश्य समझकर शोषण करते है। दूसरी बात यह है कि भूख यह सबसे बड़ी समस्या है यह आदमी को लाचार बना देती है। मूसलमान गाय, भैंस, बकरे का माँस खाते हैं तो दलित लोग भी अपने-अपने बर्तन लेकर माँस लाने के लिए उनकी भीड़ होती है। लेकिन मूसलमान लोग

दलितों को बेकार समझकर फेंका गया माँस देते हैं। हिंदू होकर भी गाय, भैंस खानेवाले चमारों को चित्रित कर

मोहनदास नैमिशराय ने दलितों के जीवन संघर्ष और भूख की त्रासदी को दिखाया है।

हिंदू और मूसलमान जब दलितों को घृणा से देखतें है तब दलित स्थिति के बारें में नैमिशराय कहते हैं कि हम लंबे समय तक हम अपमान सहते चले आये थे पर गुनाहगार नहीं थे। हम हारे हुए लोग हैं, जिन्हे आर्यों ने जितकर हासिए पर डाल दिया था। हमारे पास अंग्रजों द्वारा दिए गए मेड़ल पुरस्कार नहीं थे। हमारे पास था सिर्फ कडुआ अतीत और जख्मी अनुभव। यह कहना ही दलित संवेदना है।

दूसरी बात यह है कि जाँतिवाद की नीव पर खड़े गाँव में दलितों के मंदिर प्रवेश पर प्रतिबंध लगाया जाता है। सिसोला गाँव का पंचमुखी मंदिर दलित और सवर्णों को विभाजित करता है। वहाँ दलितों को मंदिर में प्रवेश नही दिया जाता। इस पीड़ा को नैमिशराय ने चित्रित किया है कि मंदिर में पुजारी द्वारा बाँटे जाने वाले प्रसाद का वर्णन करते हुए पुजारी की ऊँगलियों से दलित की ऊँगलियों को छुने पर गालियाँ सुननी पड़ती है। इतनाही नहीं तो दलितों याने चमारों की पाठशाला भी अलग ही है। उस पाठशाला में पढ़ने के लिए सिर्फ दलित के ही बेटे हैं और उनको पढ़ाने के लिए अध्यापक भी दलित ही हैं उस स्कूल में पानी, बिजली, पेशाबखाना, खेल का मैदान ऐसी कौनसी भी सुविधा उपलब्ध नहीं है। कभी-कभी सवर्ण अध्यापक बच्चों को पढ़ाने के लिए जब आतें हैं तब सवर्ण अध्यापक जाँतिवादी मानसिकता से ग्रस्त होने के कारण छात्रों को जाँतिवाचक नामों सें संबोधित करते है।

चमार की बस्ती में मनाई जाने वाली रविदास जयंती का वर्णन नैमिशराय ने प्रभावी ढ़ंग से किया है। मूसलमान के मोहरम के ताजिया जुलूस और रामरथ यात्रा के समान उल्लास से भजन गाकर रविदास की जयंती मनाई जाती है। यहाँ पर मोहनदास की चेतना जाग उठी है।

मोहनदास नैमिशरायजी ने अपने बचपन की अनेक घटनाओं को चित्रण के द्वारा इस स्थिती को स्पष्ट किया है कि

उनकी बहन निठारी नामक गाँव में रहती है। तब नैमिशराय और उनके भाई उनको मिलने जाते हैं। मेरठ से निठारी जाने के लिए दो बस पकड़नी पड़ती है। वह दूर होने की वजह से नैमिशरायजी को बहुत प्यास लगती है। तभी एक गाँव में वह पिने के लिए पानी मँगाते है तो उन्हे जाँति पुछी जाती है। वे चमार जाँति के है यह जानने के बाद लोग पानी देने से इन्कार कर देते हैं। कहते हैं कि आगे चमारों के घर है वहाँ जाकर पानी पिओ। सवर्ण बस्ती में पानी न मिलने के कारण मोहनदास और उनके भाई को किचड़ का गंदा पानी पिना पड़ा जिस पानी में भैंस लेट रही थी। सवर्ण जाँति के लोगों ने तो उन्हे आदमी ही मानने से इन्कार कर दिया था। तभी तो उन्हे जानवरों के साथ पानी पिना पड़ा था।

एक दिन मोहनदास नैमिशराय मेरठ से मुंबई चले जाते है। मुंबई के बारें में नैमिशराय कहते है, मुंबई भूखी थी, गरीबी थी और बेरोजगारी भी थी लेकिन आदमी आदमी के बीच जाँतियों की दीवारें नहीं थी। वहाँ कोई भी आदमी जाँति नहीं पूछता था। वहाँ सिर्फ दो जाँतियाँ थी स्त्री और पुरूष।

मुंबई की महिलाओं में होनेवाले खुलेपन के वर्णन के साथ-साथ नैमिशरायजी ने इस मायानगरी में चारों ओर फैले हुए वेश्याव्यवसाय को भी मार्मिकता से चित्रित किया है। इन वेश्याओं का वास्तव्य कोठोंपर ही होता है ऐसा नही बल्कि घरों में, बसस्टैंड़पर, रेल्वेस्टेशनपर भी वे खुलेआम ग्राहकों को लुभाने, पटाने में लगी रहती है। यह वेश्या जादा तौर पर दलित समाज की ही होती है और गरीबी की वजह से उन्हे इस व्यवसाय में ढ़केल दिया जाता है। लेकिन आधुनिक नारी की संवेदना अब जाग उठी है और वह उस बुरे धंदों से बाहर निकलने का प्रयास कर रही है।

प्रस्तुत उपन्यास मे दलितों की निर्धनता, अज्ञान, अशिक्षा, दलित स्त्रियों का सवर्णोद्वारा होने वाला यौन शोषण उनपर होने वाले घिनौने पाशवी बलात्कार आदि मार्मिकता से चित्रण किया है।

संक्षेप में हम कह सकतें है कि अपने-अपने पिंजरे यह न केवल नैमिशराय की आत्मकथा है बल्कि यह भारतीय समाज में रह रहे तमाम दलितों के जीवन का दस्तावेज भी है और संपूर्ण भारतीय समाज का दिग्दर्शन भी है। यह आत्मकथा भारतीय समाज में होने वाली असंगतियों-विसंगतियों और विषमताओं का हु-ब-हु चित्र दिखानेवाला दर्पण है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सामाजिक विषमता और शोषण की दासता से दलितों को मुक्ती दिलाने का मोहनदास नैमिशरायजी का यह एक इमानदार प्रयास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

१) अपने-अपने पिंजरे - समिक्षात्मक अध्ययन - मोहनदास नैमिशराय।
२) दलित साहित्य शोध एवं दिशा - डॉ. भरत सगरे।
३) अपने-अपने पिंजरे भाग १ और भाग २ - मोहनदास नैमिशराय।
४) इक्कीसवीं शती के हिंदी साहित्य में स्त्री- एवं दलित विमर्श - डॉ. अशोक धुलधुले।